International Journal of Applied Research 2016; 2(8): 754-758

ISSN Print: 2394-7500
ISSN Online: 2394-5869
Impact Factor: 5.2
IJAR 2016; 2(8): 754-758
www.allresearchjournal.com
Received: 21-06-2016
Accepted: 22-07-2016

राजेश कुमार
असिस्टेंट प्रोफेसर–हिन्दी
राजकीय महाविद्यालय, माँट,
मथुरा, उ० प्र०

Correspondence
राजेश कुमार
असिस्टेंट प्रोफेसर–हिन्दी
राजकीय महाविद्यालय, माँट,
मथुरा, उ० प्र०

वीरेन डंगवाल का काव्य–शिल्प

राजेश कुमार

सारांश
अपनी भाषिक और शिल्पगत संरचनात्मक विशेषता के कारण ही कोई कृति रचनात्मक साहित्य का दर्जा प्राप्त करती है । कविता में भाषा–शिल्प की यह संरचनात्मकता अन्य साहित्यिक विधाओं की अपेक्षा कहीं अधिक होती है। साहित्य अकादमी से पुरस्कृत, समकालीन हिन्दी कविता के प्रमुख हस्ताक्षर वीरेन डंगवाल अपनी कविता में सपाटबयानी जैसे सरल–सहज काव्य–शिल्प से लेकर तुकबन्दी तक का प्रयोग पूरी संप्रेषणीयता के साथ करते हैं। यह सहज–स्वाभाविक शैली ही उनके काव्य–शिल्प की वह विशेषता है जो उन्हें समकालीन कवियों में विशिष्ट बनाती है तथा लोकप्रियता के शिखर तक पहुँचाती है। यह सहजता और स्वाभाविकता उसी कविता में सम्भव है जिसका रचनाकार कवि सामान्य जन–जीवन के यथार्थ से गहरे जुड़ा हो। सामान्य जन–जीवन के यथार्थ से यह गहरा जुड़ाव ही एक रचनाकार–कलाकार और उसकी कृति की सार्थकता है।

बीज शब्द: काव्य–शिल्प,समकालीन, सपाटबयानी, तुकबन्दी,जन–जीवन, यथार्थ, संप्रेषणीयता।

वीरेन डंगवाल ऐसे कवि हैं जिनका शिल्प अलंकारिकता–चमत्कारिकता और अतिशय बनावटीपन के विपरीत अत्यंत सरल व सहज है। उनकी कविता में संवेदनाओं की अभिव्यक्ति इतनी स्वाभाविक होती है कि सहज ही यह अनुमान लगाया जा सकता है कि विषय के विविध आयामों तक कवि की पैठ अत्यंत गहरी है। निम्नलिखित पंक्ति में आम को देखकर उत्पन्न होने वाले मनोभावों की जितनी स्वाभाविक अभिव्यक्ति कवि ने की है, वह सामान्य जन–जीवन के यर्थाथ से जुड़ा हुआ,विषय का गहरा अनुभव रखने वाला ही कोई कवि कर सकता है–

''बाहर कुछ झूरा कुछ पड़ा नीला
भीतर कुछ पीला
तबीयत में आ गयी चिरपिरी एक
मौसम ने मारा डंठल ने ढीला किया
ऊपर से उद्दंडी लड़कों ने लिया देख।
पत्तों में छिपना बेकार रहा
मंत्र फूँका
यों नक़ली पकना बेकार रहा
जीवन भर रहा
कच्चे का कच्चा
तोते का फुसकारा सोंधा मीठा आम।''[1]

इन पंक्तियों में जो स्वाभाविकता है, जो प्रवाहमयता है और अभिव्यक्ति में जो निर्बाधता है, उसी से यह स्पष्ट हो जाता है कि कवि की अभिव्यक्ति निरी काल्पनिक नहीं, बल्कि यथार्थ है। इन सबसे भी महत्वपूर्ण बात है भाषा व शब्दावली की स्वाभाविकता। इस कविता में वीरेन ने शब्दावली का चयन विषय के अनुरूप ही किया है। 'फुसकारा', 'चिरपिरी', 'सोंधा', 'मीठा' जैसे शब्दों का प्रयोग सही संदर्भों में वही कवि कर सकता है जो इनकी पूरी संस्कृति से परिचित हो। इसी तरह, 'ऊपर से उद्दंडी लड़कों ने लिया देख' में 'ऊपर से' तथा 'लिया देख' पदों का प्रयोग वही कवि कर सकता है जो इनसे पूरी तरह परिचित हो तथा जिसे इनके प्रयोग का अनुभव हो। 'लिया देख' की जगह

'देख लिया' पद प्रयुक्त होता तो वह उतना स्वाभाविक व प्रभावशाली न होता। यहाँ कवि के निजी अनुभव ने अभिव्यक्ति को एकदम सजीव बना दिया है।

कई बार कवि अनुभव के अभाव में भी चलन के नाम पर यथार्थ विषयों पर कविताएँ लिख देते हैं। ऐसी कविताओं में जितनी अधिक भावुकता होती है, अस्वाभाविकता और अविश्वसनीयता उससे कहीं अधिक मात्रा में आ जाती है। अतः यथार्थ से गहराई से परिचित हुए बिना कोई कवि यथार्थवादी नहीं बन सकता। इस संदर्भ में अजय तिवारी का यह कथन दृष्टव्य है–

''परिचय के बिना प्रेम नहीं होता। × × × परिचय और प्रेम जितना प्रगाढ़ होगा, कवि उतना ही यथार्थवादी होगा, उसे अभिव्यक्ति और विकास के अवरोधों से भी उतना ही कम उलझना पड़ेगा। × × × बाह्य जगत से कवि का परिचय जितना व्यापक और गम्भीर होगा, कविता की विषयवस्तु उतनी ही प्रभावशाली होगी, कवि की भाषा उसी अनुपात में सजीव होगी,उस पर कवि की व्यक्तिगत विशेषताओं की उतनी ही गहरी छाप होगी।''[2]

वीरेन डंगवाल अपने समकालीन यथार्थ से पूरी तरह परिचित हैं तथा उसके प्रति उनका गहरा प्रेम भी है। यही कारण है कि वे बिना किसी अवरोध के अत्यंत स्वाभाविक रूप से कविता के कथ्य को प्रवाहमय भाषा में अभिव्यक्त करते चले जाते हैं। पुदीने की आकर्षक खुशबू का बखान करने वाली कविता का एक अंश उदाहरणस्वरूप दृष्टव्य है–

''सब्ज़ी ठेले की बगल से भी गुज़रो
तो तर कर देगी वह ख़ुशबू
जो इतनी अलौकिक है
कि आँखों के रास्ते ही दिमाग़ में जा पहुँचती है
और फिर फेफड़ों से होती हुई
छा जाती है हस्ती पर
× × ×
जिसे तैयार किया अलस्सुबह के एकांत में
दस वर्षीय प्रशिक्षु कारीगर ने
महर्षि चरक की पसंदीदा इस सुगंधित शीतल बूटी के साथ
हरी मिर्चें इमली का गूदा और गुड़ पीसकर।''[3]

वीरेन डंगवाल भाषा को ही सजीव और स्वाभाविक नहीं बनाते, बल्कि कई अन्य जड़ वस्तुओं को भी सजीव या मानवीकृत रूप में प्रस्तुत करते हैं। समकालीन जटिल परिवेश में हताशा, निराशा, कुंठा, ऊब, हीनताबोध आदि नकारात्मक मनः स्थितियों का प्रभाव कवि ने 'कमीज़' पर भी दिखाया है। कमीज़ भी हताश–निराश हो सकती है, 'सारे ज़माने की लात खाई हुई' हो सकती है––

''कमीज़
जब तुम इस्त्री होकर लेटी हो
तो लग जाता है
कि तुम्हारा कुछ हो ही नहीं सकता
जब टंगी हो
खूंटी के हिसाब से
तो कभी–कभी लगती हो हताश
सारे ज़माने की लात खाई हुई
बरबाद लोग
समूची ज़िन्दगी
तुम्हीं को घिसते, रगड़ते
और लोहा करते रहते हैं''[4]

इसी तरह वीरेन डंगवाल पपीते का भी मुँह लटका हुआ देख लेते हैं–

''पेड़ पर रहता है तो भी मुँह लटकाये''[5]

वीरेन डंगवाल चीज़ों को नई–नई दृष्टियों और अलग–अलग कोणों से देखते हैं। प्रकृति का मानवीकरण पहले भी होता रहा है, लेकिन वीरेन ने उसका जो मानवीकृत रूप चित्रित किया है, वह एकदम अलग है। 'नदी' को वे कभी बेशर्म स्त्री के रूप में चित्रित करते हैं, कभी काँइयां औरत, भेड़िया, पुलिस से भरी जीप या डाकुओं के रात्रि–अभियान के रूप में तो कभी निरंकुश शासन–तंत्र के रूप में। यही नहीं, उसके ये सारे रूप नकारात्मक हैं, अमानवीय हैं। एक अंश देखें –

''फिर वह बस्ती में धँसती है
नदी
डाकुओं के गिरोह की तरह
गोलियाँ दागती हुई
फिर वहीं लौट जाती है नदी
एक छिनार सकुचाहट के साथ
अपने सम्वैधानिक किनारों में
और मधुर–मधुर बहने लगती है
जैसे लाठी–चार्ज पर झूठ–मूठ शर्मिन्दा
और गोली–काण्ड को एक सही मजबूरी
साबित करने की कोशिश करती हुई''[6]

यहाँ नदी को वीरेन कई नाकारात्मक रूपों में देखते हैं और अलग–अलग आयामों से। यानी कि समय के यथार्थ को जितनी तरह से व्यक्त किया जा सकता है, उतनी तरह से वह प्रयास करते हैं। यह भी कहना चाहिए कि मात्र एक वस्तु को उठाकर कवि ने समकालीन यथार्थ के कई अवांतर संदर्भों को एक साथ पिरोया है। एक ही वस्तु को इतने भिन्न–भिन्न आयामों से देखना और अंत में फिर उन सारे आयामों को एक दृष्टिकोण से जोड़ना, यह वीरेन के ही काव्य–कौशल के वश की बात है। बाढ़ जैसी प्राकृतिक विपदा को विषयवस्तु बनाकर परंपरागत सौंदर्यपरक कविता लिखने के बजाय वीरेन नए ढंग की कविता लिख रहे हैं, जहाँ मनुष्य और प्राकृतिक परिवेश के अंतर्संबंध अत्यंत जटिल रूप में प्रस्तुत किये गए हैं। प्राकृतिक संकट और मानव–समाज द्वारा उत्पन्न हिंसा, अराजकता, अत्याचार आदि के संकट को कवि ने एक ही धरातल पर अभिव्यक्त किया है। यह एक प्रकार की फैंटेसी भी है जहाँ कवि नदी की बाढ़ को मानव द्वारा उत्पन्न संकटों के रूप में देखता है।

वीरेन डंगवाल ने अपनी कविताओं में मिथकीय सामग्री का भी सफल प्रयोग किया है। मिथकों की शुभ संकल्पनाओं के सामने वे वर्तमान की समस्याओं का उल्लेख करते हैं–

''इन्द्र के हाथ लम्बे हैं
उसकी उँगलियों में हैं मोटी–मोटी
पन्ने की अंगूठियाँ और मिज़राब
बादलों–सा हल्का उसका परिधान है
वह समुद्रों को उठाकर बजाता है सितार की तरह
मंद गर्जन से भरा वह दिगन्त–व्यापी स्वर
उफ़, वहाँ पानी है
सातों समुद्रों और निखिल नदियों का पानी है वहाँ
और यहाँ हमारे कण्ठ स्वरहीन और सूखे हैं''[7]

यहाँ पूरी कविता सपाट ढंग से मिथकीय कथ्य लेकर चल रही है। पूरी कविता में देवताओं के राजा 'इन्द्र' के वैभव का वर्णन है। ऐसा प्रतीत होता है जैसे हम इन्द्र के स्तुति–गान का गद्य रूप पढ़ रहे हैं, लेकिन केवल अन्तिम एक पंक्ति 'और यहाँ हमारे कण्ठ स्वरहीन और सूखे हैं' आकर कथ्य को एक नाटकीय मोड़ देकर कविता को निरर्थक होने से बचा लेती है। कविता में विवरण के

महत्व का भी पता यहीं चलता है, जब अन्तिम पंक्ति लिखकर कवि पूरी कविता को सार्थक कर जाता है। अन्तिम पंक्ति के बिना पूरी कविता का विवरण व्यर्थ हो जाता और विवरणों के बिना अन्तिम पंक्ति अकेले कुछ न कर पाती। इस प्रकार यहाँ कविता के दोनों ही अंश परस्पर पूरक हैं। परस्पर विरोधी स्थितियों को एक साथ रखकर कवि ने समकालीन संदर्भ को अभिव्यक्ति दी है। एक तरफ़ सितार का मधुर स्वर है, बादलों से हल्के व कोमल वस्त्र हैं, जल का अथाह भण्डार है, तो दूसरी तरफ मनुष्य की दशा इतनी दीन–हीन है कि जीवन में न तो कोई माधुर्य है न ही तृप्ति। कण्ठ प्यासे और स्वरहीन हैं।

इसी तरह 'वरुण', 'द्यौस' आदि कई अन्य मिथकीय विषयों पर वीरेन डंगवाल ने कविताएँ लिखी हैं। उन्होंने कविता में मिथकीय सामग्री का प्रयोग प्रायः व्यंग्य के लिए किया है। 'दुश्चक्र में स्रष्टा' शीर्षक कविता इसका सर्वोत्कृष्ट उदाहरण है, जहाँ कवि ने ईश्वर से सम्बंधित सभी मिथकीय विचारों पर व्यंग्य किया है तथा समकालीन यथार्थ से भी उसे जोड़कर देखा है। कुछ पंक्तियाँ द्रष्टव्य हैं–

''कमाल है तुम्हारी कारीगरी का भगवान,
क्या–क्या बना दिया, बना दिया क्या से क्या?
× × ×
हाँ, एक अन्तहीन सूची है भगवान
तुम्हारे कारनामों की, जो बखानी न जाये
जैसा कि कहा ही जाता है।
यह ज़रुर समझ में नहीं आता
कि फिर क्यों बन्द कर दिया तुमने
अपना इतना कामयाब कारखाना ?''8

धर्मशास्त्रों में ईश्वर की लीला को 'अनिर्वचनीय' कहा गया है– 'जो बखानी न जाये'। ऐसे कई अनिर्वचनीय कारनामों का विवरण देते हुए कवि समकालीन प्रश्न उठाने की भूमिका बनाता है। अंत में ईश्वर की सर्वशक्तिमत्ता पर प्रश्न उठाते हुए कवि उसके अस्तित्व पर ही प्रश्नचिह्न लगा देता है तथा कविता में प्रयुक्त मिथकीय सामग्री को समकालीन संदर्भों से जोड़ता है–

''नहीं निकली नदी कोई पिछले चार–पाँच सौ साल से
जहाँ तक मैं जानता हूँ
× × ×
प्रार्थनागृह ज़रुर उठाये गये एक से एक आलीशान
मगर भीतर चिने हुए रक्त के गारे से
वे खोखले आत्माहीन शिखर–गुम्बद–मीनार
उँगली से छूते ही जिन्हें रिस आता है ख़ून!
आख़िर यह किनके हाथों सौंप दिया है ईश्वर
तुमने अपना इतना बड़ा कारोबार ?
अपना कारख़ाना बन्द करके
किस घोंसले में जा छिपे हो भगवान ?
कौन–सा है आख़िर, वह सातवाँ आसमान ?
हे, अरे, अबे, ओ करुणानिधान!!''9

जिन मिथकों का पोषक हज़ारों साल से सत्ता पर काबिज़ एक बड़ा व शक्तिशाली वर्ग हो, उन पर इतना असाधारण व्यंग्य करने का साहस वीरेन डंगवाल जैसे कवि ही कर सकते हैं, जिनका जुड़ाव यथार्थ जीवन से है तथा जो जीवन–जगत की वास्तविकता को तर्क और व्यवहार की कसौटी पर लगातार कसते रहते हैं। ऐसा करने के लिए जिस उत्कृष्ट शिल्प–कौशल की आवश्यकता पड़ती है, वह वीरेन डंगवाल के पास है। यथार्थ अनुभवों से गहरे जुड़ाव के कारण वे ऐसे शिल्प का प्रयोग अत्यंत सहजता से कर लेते हैं।

उन्होंने लोक–जीवन में व्याप्त मान्यताओं को भी अपनी कविता की आधार सामग्री के रूप में ग्रहण किया है। 'तोते की फुसकारें', 'आम की निराशा','फ़रमाइशें ' आदि कविताएँ इसी तरह की हैं। एक उदाहरण दृष्टव्य है–

''तोते ने फुसकारा
इससे ही कुछ मीठा हो गया
बिचारा
कच्चा आम!''10

किसी ने न तो देखा है और न ही प्रयोग किया है कि तोते की फुसकारों से आम पककर मीठा हो जाता है। लेकिन लोक–जीवन में ऐसी मान्यता है, तो जन–मानस के परिवेश का यथार्थ चित्र खींचने के लिए कवि ने इस सामग्री का उपयोग कविता के लिए कर लिया।

इसी तरह 'फरमाइशें' कविता का उदाहरण द्रष्टव्य है–

''कुत्ते मुझे थोड़ा सा अपना स्नेह दे
गाय ममता भालू मुझे दे दे यार,
शहद के लिए थोड़ा
अपना मर्दाना प्यार
भैंस दे थोड़ा बैरागीपन बन्दर फुर्ती
अपनी अक्ल से मुझे बख़्शे रहना सियार।''11

लोक जीवन में कुत्ते का स्नेह, गाय की ममता, भालू का याराना, भैंस का बैरागीपन और सियार का बहरूपियापन बहुत प्रचलित है। अक्सर लोक कथाओं में ऐसे पात्रों का समावेश मिल जाता है। कवि ने भी इसी सामग्री का उपयोग अपनी कविता में किया है। इस तरह वीरेन डंगवाल लोक–जीवन के यथार्थ तक पहुँचने में तथा लोक–मानस को समझ पाने में अधिक समर्थ हो पाते हैं।

वीरेन डंगवाल अपनी कविता में ऐतिहासिक सामग्री का भी उपयोग समकालीन संदर्भों में करते हैं। 'ये अश्वारोही' शीर्षक कविता में आर्यों के भारत आक्रमण का उल्लेख करते हुए वे लिखते हैं–

''यह भी पड़ाव है कैसा
मध्य–एशिया से चलकर आये अश्वारोहियों का।
× × ×
'हम नहीं जायेंगे आगे'
पैर पटक कर अड़ रहे हैं घोड़े।
'हम नहीं जायेंगे आगे'
कूँक रहे पड़ाव की जूठन जीमते कुत्ते।
मगर याद रहे,
घोड़ों और कुत्तों के लिए नहीं शुरू किया गया था
यह सफ़र।''12

विजय अभियान पर जाने वालों के लिए अपने सैनिकों और पशुओं की फ़िक्र नहीं होती। आज की इस तेज़ विकासशील दुनिया में श्रमिकों और निम्न वर्ग के लिए कोई जगह नहीं, वे प्रभु वर्ग की प्रगति का केवल माध्यम हैं।

वीरेन डंगवाल की कविताओं में चित्रात्मकता भी मिलती है। दृश्यों के वर्णन का अवसर जहाँ भी होता है, वे वहाँ चित्रात्मक शैली अपनाते हैं और वर्णन इतना स्वाभाविक करते हैं कि कविता पढ़ते समय दृश्य अपने आप आँखों के सामने सजीव होता जाता है। निम्नलिखित उदाहरण में बरसात के बाद का एक दृश्य अत्यंत स्वाभाविक रूप से उन्होंने ने प्रस्तुत किया है–

''चीनी मिल के आगे डीजल मिले हुए कीचड़ में
रपट गया है लिये–दिये इक्का गर्दन पर घोड़ा

लिथड़ा पड़ा चलाता टाँगें आँखों में भर आँसू
दौड़े लोग मदद को, मिस्त्री–रिक्शे–ताँगे वाले।
× × ×
पोलीथिन से ढाँप कटोरी लौट रही घर रज्जो
अम्मा के आने से पहले चूल्हा तो धैंका ले
रखे छौंक तरकारी''[13]

वीरेन डंगवाल ने अपनी कविताओं में व्यंजना शब्द–शक्ति का बहुत सफल प्रयोग किया है। वास्तव में उनकी कविता वहाँ–वहाँ सर्वाधिक प्रभावशाली है जहाँ–जहाँ उन्होंने व्यंजना का प्रयोग किया है। 'हड्डी खोपड़ी ख़तरा निशान' कविता का एक उदाहरण प्रस्तुत है–

''डोमाजी उस्ताद सुधर चुके
और विधानसभा भी कभी की वातानुकूलित की जा चुकी
मान लिया भद्र लोगों, कोई ख़तरा नहीं बाक़ी बचा
हड्डी–खोपड़ीविहीन वह शुभ दिन
आ ही गया आख़िर हमारे देश में।''[14]

राजनीति और पूरी राज व्यवस्था के अपराधीकरण की जो व्यंजना कवि ने उपर्युक्त पंक्तियों में की है, उसे पढ़कर सहज ही मन में अपराधी राजनीतिज्ञों के प्रति क्षोभ उत्पन्न होता है। 'हड्डी–खोपड़ीविहीन' पद देश की बौद्धिक व शारीरिक दृष्टि से पराश्रित लुंज–पुंज जनता और सरकारों का व्यंजक है।

लक्षणा और अभिधा का भी प्रयोग करने में वीरेन डंगवाल कुशल हैं। बल्कि अभिधा तो विशेष रूप से समकालीन यथार्थ को व्यक्त करने में सक्षम है। यही कारण है कि उनकी कविताओं में अभिधात्मक कथन काफ़ी पाये जाते हैं। उदाहरण देखें–

''वैसे इन मल्लाहों में है भुजबल इतना
एक डाँड़ में बीस हाथ गंगा की धारा
कर जाते हैं पार, चट्ट कर जाते पूरी
बोतल फिर भी पलक नहीं ये झपकाते हैं''[15]

अभिधा समकालीन यथार्थ की गहरी, सरल, स्वाभाविक व प्रभावशाली अभिव्यक्ति की दृष्टि से सबसे महत्वपूर्ण है क्योंकि यह जीवन–जगत से सबसे अधिक गम्भीरता से और सीधे–सीधे जुड़ी होती है। इसके माध्यम से लक्षणा व व्यंजना के स्तर पर पहुँचना अधिक सरल भी हो जाता है। इस संदर्भ में अजय तिवारी लिखते हैं–

''अभिधा जीवन–स्थितियों से सीधे जुड़े होने का परिचय देती है। यह सम्बंध जितना गम्भीर होता है, अभिधा की सीमाओं से उठकर व्यंजकता और प्रातिनिधिकता के स्तर पर पहुँचना उतना ही सहज होता है।''[16]

उनकी कविताओं में लक्षणा के प्रयोग भी कम नहीं हैं और वे भी अपनी पूरी स्वाभाविकता व प्रभावोत्पादकता के साथ।

समकालीन कविता में आख्यान को एक बार फिर महत्व मिला और अनेक कवि पूरी कुशलता के साथ इसका प्रयोग भी कर रहे हैं। वीरेन डंगवाल चूँकि समकालीन जन–जीवन से संबद्ध कवि हैं, इसलिए स्वाभाविक रूप से वे भी इसका प्रयोग अपनी कविताओं में करते हैं। दरअसल कविता में आख्यान का होना यथार्थ जीवन के चित्रण को अधिकाधिक स्थान देता है, जिसके बिना उसकी पूर्णता संभव नहीं। उनकी एक कविता 'रामसिंह' की कुछ पंक्तियाँ दृष्टव्य हैं–

''तुम्हारी याद्दाश्त बढ़िया है रामसिंह
पहाड़ होते थे अच्छे मौके के मुताबिक
कत्थई–सफेद–हरे में बदले हुए
पानी की तरह साफ़
खुशी होती थी
तुम कण्टोप पहनकर चाय पीते थे पीतल के चमकदार गिलास में घड़े में, गड़ी हुई दौलत की तहर रक्खा गुड़ होता था
× × ×
माँ सारी रात रोती घूमती थी
भोर में जाती चार मील पानी भरने
घरों के भीतर तक घुस आया करता था बाघ''[17]

उपर्युक्त उद्धरण से स्पष्ट है कि यदि इसमें रामसिंह के जीवन से संबंधित इतने विवरण न रखे जाते तो कविता में यथार्थ की अभिव्यक्ति अपूर्ण ही रह जाती। ये विवरण रामसिंह की जीवन–स्थितियों और संघर्षों का चित्र प्रस्तुत करते हैं जिससे कविता और भी सुग्राह्य और प्रभावोत्पादक बनती है।

वीरेन डंगवाल यदि विवरणों का प्रयोग करते हैं तो भाव व अर्थ को और भी सघन तथा प्रभावशाली बनाने के लिए सांकेतिक शैली का भी प्रयोग करते हैं। कविता में सांकेतिकता के महत्व के सन्दर्भ में परमानन्द श्रीवास्तव लिखते हैं–

''ज़रूरी नहीं कि कविता में हर जगह पूरा कथानक बताया जाए। × × ×समय जितना कहा जा रहा है उससे अधिक अनकहा छूट जाता है।''[18]

वीरेन डंगवाल की कविता 'वन्या' की कुछ पंक्तियाँ इसका उदाहरण हैं–

''ठेकेदार के आदमी गये
चली गयीं जंगलात के अफ़सरों की गुर्राती हुई जीपें
अब कोई ख़तरा नहीं है दिदी
चलती हो घास लाने वण की तरफ ?
× × ×
अकेली मैं कैसे जाऊँगी वहाँ
मुझे देखते ही विलापने लगते हैं चीड़ के पेड़
सुनायी देने लगती है किसी घायल लड़की की दबी–दबी कराह''[19]

'ठेकेदार', 'ख़तरा', जैसे शब्द और 'विलापने लगते हैं पेड़', 'घायल लड़की की दबी–दबी कराह' जैसे पद इस कविता के नेपथ्य में छिपे कथ्य को स्पष्ट कर देते हैं। कम शब्दों के माध्यम से अधिक–से–अधिक बात कहने के लिए वीरेन डंगवाल इस सांकेतिक शैली का प्रयोग बड़ी कुशलता से करते हैं।

कवि ने इतिहास, पुराण, मिथक प्रकृति, राजनीति, लोकजीवन, संस्कृति, धर्म, आदि सभी क्षेत्रों से अपनी कविता के लिए बिंब ग्रहण किये हैं तथा इनका सफल प्रयोग भी किया है। इसके अतिरिक्त उन्होंने चाक्षुष, श्रव्य, स्पर्श्य आदि बिंबों का भी प्रयोग किया है।

उनकी कविताएँ मुक्त छंद में हैं, किंतु वे लय और प्रवाह का विशेष ध्यान रखते हैं। तुक भी वे अनिवार्य रूप से नहीं रखते। लेकिन आवश्यकतानुसार वर्ण की पुनरावृत्ति भी करते हैं। पुनरावृत्ति और लय का एक उदाहरण निम्नलिखित पंक्तियों में दृष्टव्य है–

''जहाँ नशा टूटता है ककड़ी की तरह
जहाँ रात अपना सबसे डरावना बैंड बजाती है
सबसे मद्धिम सुरों में
एक स्त्री जहाँ करती है प्रेम का सुदूर इशारा
जहाँ मछली का ताज़ा पंजर चबाता है ऊद बिलाव
जहाँ भ्रष्टाचार का सौंदर्यशास्त्र रचते हैं
नीच शासक ''[20]

उपर्युक्त पंक्तियों में 'जहाँ' शब्द की आवृत्ति से कविता की लय में जो प्रवाह आ रहा है वह अत्यंत प्रभावशाली है। इसी प्रकार कई कविताओं में वीरेन डंगवाल ने आवश्यकतानुसार तुकों का भी प्रयोग किया है।

संक्षेप में, वीरेन डंगवाल का काव्य शिल्प शिल्प के निर्वाह मात्र के लिए नहीं है, बल्कि इससे समकालीन जनजीवन के यथार्थ की ठीक–ठीक अभिव्यक्ति में पूरी मदद मिलती है। यथार्थ की अभिव्यक्ति में सहायक पारंपरिक काव्य–तत्वों को यदि वे निःसंकोच ग्रहण करते हैं तो अनावश्यक तत्वों को छोड़ भी देते हैं। समकालीन भारतीय जन–जीवन के यथार्थ के प्रति यह दृष्टि ही एक समकालीन कवि के काव्य–शिल्प की सार्थकता है।

संदर्भ–सूची

1. वीरेन डंगवाल, 'दुश्चक्र में स्रष्टा', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली,प्रथम संस्करणः 2002, पृष्ठः 84
2. अजय तिवारी, 'समकालीन कविता और कुलीनतावाद',राधकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली,प्रथम संस्करणः 1994, पृष्ठः 243
3. वीरेन डंगवाल, 'दुश्चक्र में स्रष्टा', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली,प्रथम संस्करणः 2002, पृष्ठः 87–88
4. वीरेन डंगवाल, 'इसी दुनिया में', नीलाभ प्रकाशन, इलाहाबाद,प्रथम संस्करणः1991, पृष्ठः 26
5. वही, पृष्ठः 79
6. वही, पृष्ठः 71–76
7. वही, पृष्ठः 67
8. वीरेन डंगवाल, 'दुश्चक्र में स्रष्टा', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली,प्रथम संस्करणः 2002, पृष्ठः 23–24
9. वही, पृष्ठः 24–25
10. वही, पृष्ठः 84
11. वही, पृष्ठः 85
12. वही, पृष्ठः 103
13. वही, पृष्ठः 56
14. वही, पृष्ठः 12–13
15. वीरेन डंगवाल, 'इसी दुनिया में', नीलाभ प्रकाशन, इलाहाबाद,प्रथम संस्करणः1991,पृष्ठः 20
16. अजय तिवारी, 'समकालीन कविता और कुलीनतावाद', राधकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली,प्रथम संस्करणः 1994, पृष्ठः 262
17. वीरेन डंगवाल, 'इसी दुनिया में', नीलाभ प्रकाशन, इलाहाबाद,प्रथम संस्करणः1991,पृष्ठः 16
18. परमानंद श्रीवास्तव, 'कविता का अर्थात्',आधार प्रकाशन, पंचकूला, हरियाणा,संस्करणः 1999, पृष्ठः 239
19. वीरेन डंगवाल, 'इसी दुनिया में', नीलाभ प्रकाशन, इलाहाबाद,प्रथम संस्करणः1991, पृष्ठः 66
20. वीरेन डंगवाल, 'दुश्चक्र में स्रष्टा', राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली,प्रथम संस्करणः 2002, पृष्ठः 47